बड़ा निर्लज्ज है, इसको किञ्चिन्मात्र भी लाज नहीं. देखो, यह पाखण्डी, हमारे सन्मुख ऐसे कटु वाक्य कहता है.

मंत्री—महाराज! यह पुरुष ऐसेही होते हैं, इनके छल-छिद्र और कपट किञ्चित् भी नहीं होता, साधारण चाल और प्रेममें उन्मत्त जैसे भीतरसे वैसे बाहरसे.

रा० समर०—प्रेमी पुरुष कहीं ऐसी मूर्खता और निर्लज्जपनकी बातें करते हैं, इसके वाक्य सुनकर मुझको अत्यन्त क्रोध उत्पन्न होता है, अभी वधिकोंको बुलाकर इसको फांसी दिलवा दो.

मंत्री—जो आज्ञा महाराजकी, परन्तु यह प्रेमीलोग हैं, इनपर क्रोध करना वृथा है, जहांतक होसके इनपर कृपादृष्टि रखनी चाहिये, यह लोग ऊंच नीचको नहीं जानते.

रा० समर०—इससे अधिक और क्या ऊंच नीच होगी, जो भरीसभामें ऐसे निर्लज्जताके वचन कह रहा है.

मंत्री—महाराज! यह प्रेमी लोग सच्चे और निष्कपट होते हैं, इनके दुर्भाव नहीं.

रा०समर०—हमारे हृदयमें इस पापीके दुर्वाक्य शूलसम खटक रहे हैं, मेरे नेत्रोंके सामनेसे इस कुकर्मीको ले-जाओ, और इसी समय वधिकोंको बुलाकर इस दुष्टको फांसी दिलवा दो, यह भी तो जाने कि, निर्लज्जताका फल ऐसा होता है.

मंत्री—आपकी आज्ञा मेरी शिरआँखोंपर, परन्तु मु-

झको यह जान पड़ता है कि, यह किसी राजाका पुत्र है, प्रेमकी तरंगमें आकर घरसे निकल भागा है, सोच समझके फांसीकी आज्ञा देना, जो किसी बलवान् राजाका पुत्र हुआ तो न जानिये पीछे क्या उपद्रव मचे, प्रथम इसका नाम ग्राम बूझिये, पीछे जो इच्छा हो सो करना.

रा० समर०--मैंने इस दुष्टसे पहिलेही नाम, ग्राम बूझा था, परन्तु इसने कुछ उत्तर नहीं दिया, अब मैं इसको फांसीकी आज्ञा दे चुका. यह कालका पुत्र क्यों न हो, मुझको कुछ भय नहीं, जाओ अभी फांसी दिलादो.

नगरनि०---(नेत्रोंमें आँसू भरकर मनहीमन) ऐसे सुन्दर स्वरूपवान् पुरुषको, विना अपराध राजा फांसीकी आज्ञा देता है, क्या करें, इस समय हमारी कुछ वार नहीं बसाती, पराधीन हैं.

सुदर्शन—आप तो मुझको फांसीकी आज्ञा दे चुके, अब परमेश्वरसे मेरी यह प्रार्थना है, मुझको तो फांसी होहीगी, परन्तु सुख तुझको भी नहीं मिलेगा, मुझको मारकर पीछे बहुतेरा पछितावेगा, और अनेक कष्ट उठावेगा कि, हाय! मैंने क्या किया? किसकारण कि, जो कोई विना अपराध किसीपर अत्याचार करता है, वह जन्मजन्मान्तर नरकवास करता है. जो प्राणी किसीकी जड़ काटता है, परमेश्वर उसका बदला उसको तत्काल दिखाता है. तू विना अपराध मुझको

दण्ड तो देता है, इसका फल परमेश्वर तुझको बहुत शीघ्र दिखावेगा.

रा० समर०—इस नीचको मेरे सन्मुखसे ले नहीं जाते.

कोतवाल०—(हाथोंमें हथकड़ी डालकर) इधरको चल, बहुत बक बक न कर, तुझको महाराजका कुछ भी भय नहीं, चल तेरेलिये फांसीकी आज्ञा हुई, अब तू फांसीपर चढ़ाया जायगा, और सब नगरनिवासी तेरा कौतुक देखने आवेंगे, और वधिक तेरी लोथको फांसीसे उतारकर पावोंमें रस्सी बांध, इस नगरकी गली गलीमें घुमावेंगे, और यह शब्द प्रत्येक स्थानपर पुकार पुकारकर कहेंगे कि, यह शव उसी पापी पाखण्डीका है, जिसने राजकुमारीसे स्नेह किया था.

सुदर्शन—अब क्या प्यारीका प्रेम छूटगया, एक फांसी क्या सौ फांसी क्यों न हो जायँ, परन्तु प्यारीका प्रेम कहीं छूटता है, वह तो जन्मजन्मान्तरसे चला आया है. अरे मूर्ख, सच्ची प्रीति छूटती कहीं सुनी है ?

दोहा.

प्रीति न छूटत है कबहुँ उत्तम मनकी लाग;
नौ योजनजलमें बसे, चकमक तजे न आग ॥

कोतवा०—अरे सिपाहियो ! इसको फांसीघरमें ले जाओ, और नंगी तलवारें करके इसको चारोओरसे घेरलो, यह बड़ा नटखट है, कहीं भाग न जाय, बहुत सावधानीसे

रहना, प्रातःकाल इस चोरको फांसी दीजायगी, वधिकोंसे कहला भेजना, सूर्योदयसे पहिले आकर उपस्थित हों.

सिपाही—अरे चोर! प्रातःकालही तुझको फांसी दीजायगी, आजकी रात तेरे तनमें प्राण और हैं, इस समय जो तेरी इच्छा हो सो कहले, कलको यह संसार तुझे स्वप्नवत् होजायगा, परन्तु देखा प्रेमका परिणाम, इसीलिये सज्जन पुरुष किसीकी ओरको दृष्टि उठाकर नहीं देखते, अधिक तुझसे क्या कहें, जैसा तूने किया उसका फल तुरन्त भोगना पड़ा.

सुदर्शन—हे सिपाहियो! तुम प्रेमका सार क्या जानो, अब विलम्ब करना वृथा है. कलको क्या होगा? अभी बधिकोंको बुलाकर, मुझको फांसी दिलवादो. अब मुझको प्यारीके वियोगके सहनेकी सामर्थ्य नहीं, घड़ी घड़ी काटनी कठिन पड़ी है, विना प्राणप्रियाके हमारी देह कहां, कहीं मणिविन सांप और जलविन मीन जी सकता है? कदापि नहीं, और जो मेरी दुर्दशा देखकर तुम्हारे चित्तमें दया आगई हो तो मेरा यह समाचार उस प्राणेश्वरीके पास पहुँचा दो कि, तेरा प्राणप्यारा कल मारा जायगा, जो तुझको उसकी सूरत देखनी है तो जाकर देख आ.

सिपाही—बहुत वृथा बकवाद न कर, चुपचाप बैठा रह.

सुदर्शन—हे दैव! आज मैं ऐसा होगया, तुच्छ मनुष्य भी मेरी बात नहीं सुनते.

एक सिपाही—मुझको तेरा पूर्ण प्रेम देखकर, मेरे मनमें दया आती है, जो वृत्तान्त तुझको कहना हो, वह सब लिखकर, मुझको एक पत्र देदे, मैं तेरी प्यारीके पास पहुँचा दूंगा.

सुदर्शन—देता हूं लेते जाओ.

सिपाही—लाओ.

(पत्री लिखकर देता है, और जवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटकका शालिग्राम वैश्यकृत चतुर्थाङ्क सम्पूर्ण.

पञ्चमाङ्कः

स्थान लावण्यवतीका आनन्दभवन.

(सब सखी शृंगार बनाती हैं और लावण्यवतीके निकट आती हैं).

सरोजि०—सखी ! आज हरियाली तीज है. चलो, बागमें हिंडोला पड़ा है झूलनेके लिये.

लावण्य०—अच्छा प्यारी ! चलो (मनहीमन) अच्छा हुआ कुछ वहाना करना न पड़ा, प्राणनाथ भी अकेले बैठे घबराते होंगे, यह भली बात बनी, तो मैं शृंगार कर लूं.

सरोजि०—शृंगार करना तो अवश्यही उचित है, एक तो काजरी तीज और दूसरे प्राणपतिसे मिलना.

लावण्य०—सखी ! तू देखनेमें तो भोली २ है परन्तु तेरी ठठोली नहीं गई, मुझे ऐसी ठठोली नहीं भाती.

सरोजि०—यह बातें ऊपरके मनसे कहती है वा भीतरके मनसे.

लावण्य०—(नीचे नेत्र करके) लो, मैंने शृंगार भी करलिया, अब शीघ्र चलो.

प्रेमलता—बागमें पीछे चलियो पहिले घरपर झूलनेका नेग करलो.

लावण्य०—जो तुम्हारी इच्छा.

प्रेमलता—प्यारी ! हमारी यह इच्छा है, जो यहां नेग करलोगी तो सांझतक आ रहैंगी, नहीं तो दुपहरको ही आना पड़ेगा.

लावण्य०—यह तो भली बात विचारी.

प्रेमलता—अच्छा तो पहिले तुम झूलो, और हम झोंके दें तो हमारा मन प्रसन्न हो.

लावण्य०—यह बात मुझको भी स्वीकार है, जिस बातमें तुम्हारा मन प्रसन्न हो, जो मुझको झुलाओ हो तो एक मलार भी मैं गाऊंगी.

प्रेमलता—अच्छा प्यारी ! एक मलार नहीं चार मलार गा लो.

लावण्य०—लो मैं उत्थानिका उठाती हूं. तुम सब मिलकर गवालो.

राग मलार.

कब मिलि है सखी प्राणपती, पियाबिन जिया घबराय;
पिया पिया कूंकै है पपीहरा, पीको रह्यो है बुलाय।
सब सखी पियासंग झूलती, रेशमझूल बटाय ॥ १ ॥
जिनके पति परदेशमें, उनको कछु न सुहाय।
घर घर पूजे तीजो काजरी, पियको ढिग बैठाय ॥ २ ॥
बैरी हमारो भयो पञ्चशर, सब तन दियो जराय।
पल पल बीते मोहिं कल्पसम, पिया अब लीजे बचाय ॥३॥

प्रेमलता—धन्य है आली! तुमने अपनेही प्रयोजनकी मलार गाई.

लावण्य०—सखी! इसमें मेरा क्या प्रयोजन है?

प्रेमलता—प्यारी! मैं तुम्हारे प्रयोजनको और संकेतोंको भलीभांति समझती हूं, तुम्हारी कोई बात प्रयोजनसे शून्य नहीं, तुमने अपने प्राणाधारको गानेके बहानेही स्मरण करलिया, धन्य है तुम्हारी चतुराईकी.

लावण्य०—जब यही बात है, तो अब सब शगुन पूरा हो गया, अब शीघ्र बागको चलो, बिलम्ब मत करो.

प्रेमलता—क्षणमात्र और बिलम्ब करो, सन्मुख छींक हुई है.

लावण्य०—तुम तो एक न एक ऐसीही तीन पांच लगाती हो, भला ब्यौहारमें छींकका क्या विचार है?

प्रेमलता—नहीं विचार है तो चलो. (सब सखी बागको जाती हैं, और सन्मुखसे एक प्रतिहार आता है.)

प्रतिहार—तुमको यह पत्री दी है, लो.

सरोजि०—किसने दी है?

प्रतिहार—नाम इसमें लिखा है, पढ़ लो.

स्वर्णल०—(पढ़कर) महाराज सुदर्शनकी है.

लावण्य०—मेरे प्राणवल्लभकी ?

प्रेमलता—हां सखी ! तुम्हारेही प्राणनाथकी है.

लावण्य०—(मग्न होकर) लाओ (नेत्रोंसे छुवाय हृदयसे लगाली.)

प्रेमलता—सखी ! लो, तुम पहिलेही घबराईजाती थी, अब घर बैठेही प्राणपतिकी पत्री लो.

लावण्य०—अरी ! मैं तो पहिलेही कहती थी कि शीघ्र चलो, परन्तु तुमने एक न माना.

स्वर्णल०—चलो पछितावा पीछे करलीजो, पहिले पत्री तो पढ़ लो.

लावण्य०—प्यारी ! तुमहीं पढ़कर सुना दो.

स्वर्णल०—नहीं आलीं, मैं नहीं पढ़नेकी.

लावण्य०—क्यों ?

स्वर्णल०—न जानिये, जाने कैसी २ प्रेमप्रीतिकी गुप्त बातें लिखी होंगी.

लाव०—सखी! तुमसे कौनसी बात छिपी है, तुम तो कार्यकी कर्ताही ठहरी.

स्वर्णल०—तो मैं पढूं.

लाव०—सखी! तुम तो वृथा विलम्ब करती हो, मैंने कब कहा था कि, तुम पढ़ो, पत्रीके पढ़नेमें विलम्ब करना उचित नहीं.

स्वर्णल०—लो मैं पढ़ती हूं. प्रीतमप्यारेकी पाती नेक कान लगाकर सुनो. (पत्रीको देखतेही नेत्रोंसे अश्रुधारा बह निकली. मूर्छित हो, पृथ्वीपर गिरपड़ी).

लाव०—(चकित होकर) सावधान हो! सावधान हो! अरी, पत्रीमें ऐसी क्या विरुद्ध? बात लिखी है जो तू देखतेही व्याकुल हो, पछाड़ खागई, वह बात तो कह.

स्वर्णलता—(सचेत होकर) कुछ कहनेके योग्य हो तो कहूं; आज हमारेऊपर अचानक वज्र टूटपड़ा, सर्वनाश होगया, हमारा अंत आपहुँचा, महाप्रलय हुई जाती है. (यह कह, फिर मूर्छित होगई.)

लाव०—(घबराकर) अरी, कह तो सही क्या लिखा है?

स्वर्णलता—(फिर चैतन्य होकर) मेरी सुधिबुधि ठिकाने नहीं, हृदय उमड़ा आता है, (गद्गद्कण्ठसे) मुझसे बोला नहीं जाता, सरोजिनीको दो. वह पढ़ेगी.

सरोजि०—(सब सखियोंको ढिग बैठाय पत्थरकी छाती करके, पाती सुनाती है) स्वस्ति श्री प्रीतममनरञ्जनी, कोटिक-

प्रभञ्जनी, हृदयानन्ददेनी, गजगति, मृगनैनी, शरदशशिल-जावन, प्रीतममनभावन, विधाता तुम्हारे सुन्दरस्वरूपकी शोभाको सदा अधिक करे. हे प्राणवल्लभे ! हे चन्द्रानने ! ! हे कृशोदरी ! ! ! हे सुन्दरी ! जिस समय तू बागसे चली आई, उसी समय कोतवालने आकर मुझको पकड़लिया, और तेरे पिता राजा समरसिंहके निकट ले गया, और मेरा तेरा सब वृत्तान्त सुनाया, राजाने क्रोधित होकर आज्ञा दी कि, इसको इसी समय कारागार लेजाओ, और कल सूर्योदयसे पहिले स्मशानमें लेजाकर इसको फांसी दे दो.

लावण्य०—(अकुलाकर) हाय हाय, यह कैसा वज्र टूटा. हे प्राणनाथ— !

(यह कह मूर्छित हो गिरगई).

सरोजि०—प्यारी ! सचेत हो सचेत हो, धैर्य धरके पहिले पत्री तो सुनलो, क्योंकि, अभी तुम्हारे प्रीतमप्यारेका बाल बांका भी नहीं हुआ, इस समय सौ उपाय हो सकते हैं, इससे झटपट पत्रीका वृत्तान्त सुनकर, शीघ्र कोई उपाय करो.

लाव०—सखी ! तुम्ही उपायकी करनेवाली हो, मुझसे क्या होसकता है ?

सरोजि०—सुनो प्यारी ! मेरी सूरत देखनी है तो देख जाओ, और अपने चंद्राननका इन नयनचकोरोंको दर्शन दिखा जाओ.

कवित्त.

पंकज आनन्द होत सूर्यके उदय भये।
कुमुद आनन्द होत चन्द्रमापरसते ॥
भौरन आनन्द होत आगम वसन्त जानि।
मोरन आनन्द होत बरषा सरसते ॥
हंसन आनन्द होत मानसर मोती चुगे।
साधुन आनन्द इच्छा पावत अरसते ॥
सबको आनन्द होत अपने मनभावनसों ॥
हमरो आनन्द प्यारी आपके दरशते ॥ १ ॥

जो मेरे मरतेसमय मेरे सन्मुख आजाओगी, तो यह प्राण सहजमें निकलजायँगे, और मेरा मन भटकता न रहैगा; और हे प्यारी! जो तुमसे होसके तो इतना काम और करना; अपनी प्यारी प्रेमलताको भेजकर, मेरे मित्र सुलोचनसे कहला भेजना; कि प्रातःकाल तेरे मित्रको फांसी लगेगी, जो कुछ यत्न तुमसे हो सके सो करना. और प्यारी! इतना काम और करना, मेरे शवको लाकर अपनी पुष्पवाटिकामें नलनी सरोवरके तटपर चिता बनाकर, अपने कोमल कमलसे हाथोंसे अग्नि लगादेना, जो अगले जन्ममें मेरे हृदयमें जलन न रहै, उस भस्मको एक पात्रमें रखलेना, और नित्यप्रति अपने हृदयसे लगालिया करना, जो मेरा हृदय शीतल रहै; और उसी ठौर मेरी एक छत्री बना देना, और उसके द्वारपर यह दोहा लिखा देना.

दोहा—मनकी मनहीमें रही, कही न अपनी बात।
प्राणगये हू पै रहै, यहै सोच दिनरात ॥ १ ॥

और कभी चौथे पांचवें दिन कृपा करके तुम भी अपने नेत्रोंके जलसे मेरे हृदयको शीतल करती रहना, और तुम अपने मनको आनन्द रखना, मेरे मरनेका शोक संताप कुछ मत करना, विधाताने हमारा तुम्हारा संयोग इतनेही दिनका लिखा था. अधिक क्या लिखूं ?

आपका दर्शनाभिलाषी सुदर्शन.

लावण्य०—हा प्राणाधार ! मुझको माझधारमें छोड़ जाते हो, हा जीवनमू०—(यह कह मूर्छित होगई.)

स्वर्णल०—(नेत्रोंमें आँसू भरकर) प्यारी ! सावधान हो, सावधान हो ! अभी कुछ नहीं बिगड़ा, शीघ्र उपाय कीजिये; प्रथम तो एक पत्री अपने पिताको लिखो, दूसरे प्रेमलताको सुलोचनके पास भेजो.

लावण्य०—(सचेत हो) क्या कहा ?

स्वर्णलता—प्रेमलताको सुलोचनके पास भेजो, और एक पत्री पिताजीके पास भेजो.

लाव०—अरी सरोजिनी ! शीघ्र लेखनी मसिपात्र, कागद ला, प्रथम एक पत्री पिताको लिखूं. (पत्री लिखकर, सरोजिनीको दी.) लो यह चिट्ठी शीघ्र पिताजीके पास पहुँचा दो.

सरोजि०—जो आज्ञा.

प्रेमलता—मेरेलिये क्या आज्ञा है ?

लाव०—प्यारी ! तू यह काम कर, प्रथम तो मेरेलिये एक घोड़ा और मर्दाने वस्त्र और अनेक अस्त्र शस्त्र ला, मैं पुरुषका वेष बनाकर, प्राणेशके पास जाती हूं और तू मर्दाना वेष बनाकर, अस्त्र शस्त्र लगा, एक घोड़ेपर सवार हो, सुदर्शनके मित्र सुलोचनके निकट जा, और एक घोड़ा और केशरिया जोड़ा, अनेक प्रकारसे अस्त्र शस्त्र लेती जा, और यह सब वृत्तान्त सुनाकर, और उसको अपने संग लेकर शीघ्र आ. इधरसे मैं जाती हूं. जो पिताने मेरे जीवनाधारको न छोड़ा, तो ऐसा युद्ध करना, जो एकवार बीरोंके मन हिलजाँय और आकाश धूलसे आच्छादित होजाय, और पृथ्वीपर रुधिरकी धारा वह निकले, सब नगरमें हाहाकर मच जाय.

प्रेमलता—जो आज्ञा. (दोनों जाती हैं और जवनिका गिरती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटकका शालिग्रामवैश्यकृत पञ्चमाङ्क सम्पूर्ण.

षष्ठ अङ्क.

स्थान स्मशान.

(फांसी गड़रही है, चारों ओर सेनापति सेना सजाये खड़े हैं,

बधिक सुदर्शनके हाथ बांध रहे हैं, और सब नगरनिवासी हाहाकार कर रहे हैं.)

बधिक०—भाई ! इधर उधर क्या देखते हो; चलो चढ़ो फांसीके ऊपर, अब सोचविचार करना वृथा है, यह सोच विचार तो उसीसमय करना था, जब लावण्यवतीसे स्नेह न किया था, परन्तु बड़े शोककी बात है, तुमने लावण्यवतीसे प्रीति करके क्या फल पाया ? और उलटे अपने प्राण गमाये और संसारमें दुर्नामता हुई. जो इतना प्रेम परमेश्वरसे करते तो इस समय देवता विमान लिये तुम्हारी सेवामें खड़े होते, क्या कियाजाय ? हरिइच्छा बलवान् है.

सुदर्शन—भाई ! तुम क्या कहरहे हो? तुम्हारी बात मेरी समझमें कुछ नहीं आती, कहीं सची प्रीति लगी छूटती सुनी है ? चकोर चन्द्रमासे प्रीतिकरके, पतङ्ग दीपकसे स्नेह करके, मीन जलसे प्रेमकरके, अपने तनका त्याग करदेते हैं, परन्तु प्रीति नहीं छोड़ते. जब पशुपक्षियोंका यह नियम है तो मैं उनके सन्मुख भी मुख दिखानेका न रहा, धिक्कार है ऐसे जीने पर, एकदिन तो मरनाही होगा, फिर क्यों प्रेमियोंके नामको धब्बा लगाऊं ? मरनेका मुझको किञ्चिन्मात्र भी शोक नहीं, परन्तु यह लालसा मनमें रहगई कि मरनेके समय भी उस मनमोहनीका दर्शन न हुआ. जो क्षणमात्रको भी वह मनमोहनी अपनी बांकी झांकी दिखाजाती तो

मेरे हृदयमें ऐसी प्रबल प्रचण्ड दाह विरहानल प्रज्वलित न होती. अब यह विरहानल मेरे शरीरको भस्म किये डालती है.

बधिक—अब कालके कौर हुए तौ भी लावण्यवतीको नहीं भूलते. धन्य है मोहकी फांसीको जो फांसीपर चढ़नेको उपस्थित है, और मोहकी फांसीको नहीं काटता. अरे मूर्ख ! अब भी चैतन्य हो, और इस संसारके मोहको त्याग, परमेश्वरसे प्रीति कर, जो मोक्षका भागी हो. अरे मूर्ख ! मनुष्यसे प्रीति करके इस दुर्गतिको तो प्राप्ति हुआ, तौ भी मोहनी २ पुकारेही जाता है ? ऐसी आंखोंके आगे अन्धेरी छागई ? स्त्रियोंसे स्नेह करनेका फल देख लिया ? फांसी प्रस्तुत है और नगरनिवासी कौतुक देख रहे हैं, कालका दमामा शिरपर बाज रहा है, इससे अधिक कोई और कुगति होगी? जो परमेश्वरसे स्नेह करते तो इस भांति, अनआईमें क्यों मरते ?

सुदर्शन—भाई ! तुमने यह सोरठा नहीं सुना !

सो०–किरच किरच है जात, चकमक तजै न आगको;
महज्जननकी बात, प्राण तजें पण नहिं तजें ॥ १ ॥

बधिक—(परस्पर)देखो, भाई ! यह वियोगी प्रेमके मदमें कैसा मग्न होरहा है, जिसको अपने तनमनकी तनक भी सुध नहीं, हाय ! इसकी यह दुर्दशा हमसे देखी नहीं जाती. हाय ! ऐसा सुन्दर स्वरूपवान पुरुष हमारे हाथसे मारा जाय ! क्या कियाजाय? राजाकी आज्ञासे बेवश हैं; नहीं, हमारा मन तो

इस मदनमोहनके फांसी देनेको नहीं चाहता. राजाके भयके मारे इसको फांसीपर चढ़ाते हैं. परमेश्वर किसीको पराधीन न करे.

सुदर्शन—मेरे मरनेका समय तो आगया और वह चित्तचोर अबतक न आई. हे मित्रो ! तुममें ऐसा कोई परोपकारी पुरुष नहीं, जो मेरे मरनेका समाचार लावण्यवतीसे कहै ? मैं उसका उपकार जन्मजन्म न भुलूंगा. मुझको यह पूर्ण विश्वास था, कि मेरे मरनेके समय वह चन्द्रवदनी अवश्य आवेगी. न जानिये वह मदनमोहनी क्यों न आई ? वा उसको भी किसीने कारागारमें बन्द कर दिया.

बधिक—(सजल नयन कर) हम परवश हैं. हमारा कुछ वश नहीं, चारों ओर सूर्यका प्रकाश होगया, राजाके आनेका समय है, अब झटपट फांसीपर चढ़ो, जो राजा आगये और तुमको जीता पाया तो कहीं तुम्हारे संग हमको भी फांसी न दे दें, अब लावण्यवतीका मोह छोड़ो और फांसीपर चढ़ो.

सुदर्शन—(फांसीपर चढ़कर) सब नगरनिवासियोंको मेरा दण्डवत् प्रणाम. (आपही आप) अरे भाग्य ! अभागी ! तूं मुझको फांसीहीपर चढ़ानेके लिये यहां लाया था ? हाय मेरी माताने दूध पिला पिलाकर इसीदिनके लिये पाला था ? हाय ! पराये देशमें कुछ बल नहीं चलता. मेराही तो चित्त चोरी गया, और मुझकोही उलटा चोर बनाया. ऐसे देशको

वारंवार नमस्कार है. हाय ! इस समय जाने मित्र सुलोचन भी कहां चलागया ? जो इस समय वह होता तो न जानिये क्या क्या उपाय करता ? हाय! यह प्राण भी चले और प्राण-प्यारी भी न मिली. लो भाइयो! अब मैं सबसे विदा मागता हूं. मेरा अपराध क्षमा करना. लो भाई बधिको, अब विलम्ब मत करो, खैंचो फांसी.

बधिक—भाई ! हम क्या करें, पराधीन हैं; हमारी कुछ नहीं बसाती, हाय ! ऐसे मनोहर कुमारको हम अपने हाथसे मारें, यह पराधीनता जो चाहे सो करावे. (यह कह, सुदर्शनके गलेमें फांसी डाली, और सब नगरानिवासी हाहाकार करने लगे.)

लावण्यवतीका प्रवेश.

लाव०—अरी स्वर्णलता ! आज इस स्थलमें कैसी भीड़ है, और किसलिये यह सेनाके सिपाही जहां तहां घूम रहे हैं.

स्वर्णल०—सखी ! मुझको कुछ सुध नहीं.

लाव०—सरोजिनी ! तूने कुछ सुना.

सरोजि०—प्यारी ! सुना तो कुछ नहीं, परन्तु बुद्धिसे यह विदित होता है कि किसी मनुष्यको फांसी दी गई है.

लाव०—अरी, यह तो कह, राजकुमार कहां है.

सरोजि०—सखी ! मुझको कहीं दृष्टि नहीं आता.

लाव०—(नगरनिवासियोंसे) कहो भाई, आज किसको फांसी दीगई.

बटोही—राजा समरसिंहकी कन्याके प्रेममें एक विदेशी कहींसे आया था, उसको चोर २ करके कोतवाल कहींसे पकड़ लाया, और राजा अन्यायीने विना सोचे समझे उसको फांसीकी आज्ञा देदी, उसी विदेशीको आज फांसी लगी है. उसकी मनमोहनी छवि हमारे हृदयसे अबलों नहीं बिसरती और उसके पूर्ण प्रेमको देख, सब नगरनिवासी आंखोंसे अश्रुधारा बहा रहे हैं, उस अनाथके शवका कोई क्रिया करनेवाला भी नहीं, उस मृतककी सूरतपर अबतक भास्कर-कासा तेज भास रहा है.

लाव०—(हृदयमें कराघात कर) हा जीवनमूल ! हा प्राणनाथ !—

(यह कह, पछाड़ खा, पृथ्वीपर गिरपड़ी, सखी हाहाकार कर पुकार उठी.)

सरोजि०—(नेत्रोंमें जल भरकर) प्यारी ! उठो, शरीरको सँभालो, चैतन्य होकर बैठो, क्यों रो रोकर आंखें लाल करती हो ? अब धैर्यधारणका समय है. अब सुदर्शनका दर्शन फिर अगले जन्ममें देखना.

लाव०—(सचेत होकर) हा प्राणेश्वर ! हा जीवनाधार ! हा प्राणवल्लभ ! हा प्राणनाथ!हा मदनमनलजावन ! हा प्राणप्यारी ! मनभावन ! हा इस दुखियाके दुःख दूर करनेवाले ! हा मेरे प्रीतमप्यारे ! हा विरहानलके शीतलकर्ता ! हा इस अभागिनीके भयहर्ता ! हा क्षत्रियकुलभूषण ! हा मनोजमन-

विदूषण ! हा अपनी प्राणप्यारीके आनन्ददाता ! हाय ! इस निर्दई विधाताने स्त्रियोंका हृदय भी कुलिशसे कठोर रचा है, जो प्राणनाथकी यह गति देखकर, भी यह पापी हृदय नहीं फटा. (फिर बेसुध होगयी.)

सरोजि०—अरी स्वर्णलता ! शीघ्र वस्त्रसे प्यारीको पवन कर, अब हमारी राजकुमारीका जीना भी महाकठिन है, बारम्बार मूर्छित हो हो जाती है, और जो सचेत होती है तो, हा प्राणाधार, हा प्राणाधार, पुकारती है, जाने परमेश्वरको क्या करना है ?

स्वर्णलता—प्यारी ! सावधान हो ! सावधान हो ! ! प्रथमही प्राणघात करना उचित नहीं, चलो पहिले प्राणनाथकी सूरत देखलो, पीछे जो तुम्हारी इच्छा हो सो करना.

लावण्य०—सखी! इस समय मुझको कुछ सुध नहीं, जहां तुम्हारी इच्छा हो, वहां ले चलो. अच्छा है, मरनेके समय प्राणनाथके दर्शन हो जायँ.

(सखियोंसमेत लावण्यवतीका सुदर्शनके शवके निकट प्रवेश.)

(सुदर्शनके शवको देख, लावण्यवती हृदयमें और मस्तकमें कराघात करती है और विलाप कर कर, आँखोंसे अश्रुधारा बहाती है और यह गीत गाती है.)

राग मलार.

बोरि मोहिं मझधार कहां गये हे जीवनआधार;
नदिया गहरी नाव झाँझरी तीक्षण बहत बयार;

खेवाही जब पड़े भवरमें फिर को खेवनहार;
इत उत तकत चकित चितविभ्रम चहुँ दिशि रही निहार;
अपनो कोऊ दृष्टि न आवत कौन लगै है पार;
हे पति विपति विदारणहारे बिनवत वारंवार;
आय सहाय करो किन मोरी बही जात मझधार;

सरोजि०—प्यारी! रोते रोते कण्ठ सूख जायगा. तनक-सा जल पीलो.

लावण्य०—अरी चल! कैसा जल लिये फिरती है, मैं आंसुवोंके जलसे ही डूबीजाती हूं. (फिर सुदर्शनकी ओर देख कर) हे प्राणपति! आप तो वैकुण्ठको चल दिये, और मुझको यहां तड़फता छोड़ा, अपनी कही न मेरी सुनी, अब मेरा कौन है? हा प्राणनाथ! हे स्वामी! आपने मेरेलिये लाखों कष्ट सहे, घरबार छोड़ा, योगीका वेष बनाया, बन-बन मारे मारे फिरे, मातापितासे बिछोहा किया. जब मुझको पाया तो यह गति हुई! हा प्राणवल्लभ! हे प्राणप्यारे! अपने मित्र सुलोचनसे भी मुख मोड़ बैठे और मुझको भी छोंड बैठे. यह दासी तुम्हारे वचनोंकी प्यासी है. मुझको अपनी दासी जानकर, शीतलवचनोंसे मेरे हृदयका विरहानल शांत कीजिये और इस दासीकी सुध लीजिये. हा प्रीतम! हा प्रीतम!

स्वर्णलता—हे प्यारी! कहां हैं प्रीतम? प्रीतम तो वैकुण्ठवासी होगये. क्यों वृथा अपना मस्तक धुनती हो. कहीं

मृतक भी बोलते सुने हैं. क्यों रो रोकर अपनी आँखें लाल करती हो ?

लावण्य०—अरी कैसी आँखें ? अब कोई घड़ीमें यह शरीरही अग्निकी लपटोंसे लालहुआ चाहता है, कहीं बादलविना बिजली चमकती सुनी है ? कहीं जलबिन मीन जीता देखा है ? कदापि नहीं. हे जीवनाधार ! मेरा जीवन आपहीके अधीन है, जब जलही नहीं तो मीन कहां; हे नाथ ! जिस समयमें तुम्हारे सन्मुखसे घरको चलनेको उपस्थित हुई आप वारंवार मुझको बुलाते थे कि हे प्यारी ! हमारी एक बात और सुनती जाओ. अब मैं तुम्हारे सन्मुख खड़ी हूं. मेरी ओरको आंख उठाकर भी नहीं देखते. प्यारे ! ऐसा मुझसे क्या अपराध हुआ ? नाथ ! जो अपराध भी होगया हो तो क्षमा करना.

स्वर्णल०—प्यारी ! अब इनकी गतिका कुछ उपाय करना चाहिये, क्यों विलंब करती हो ?

लावण्य०—प्राणनाथकी गति और मेरी गति एक संगही होगी. (आपही आप) अरे पापी प्राण ! तू नहीं निकला, तुझको प्राणप्यारेकी यह गति देखकर भी शोक न हुआ. अरे नीच निर्लज्ज पापी ! क्या तेरी लज्जा रसातलको चली गई ?

सरोजि०—प्यारी ! धैर्य धरो धैर्य धरो. यह आपका कठिन दुःख हमसे देखा नहीं जाता.

लाव०—जिसके हृदयमें विरहानल भड़कती है, वही उस आगके तेजको जानता है. दूसरेकी क्या सामर्थ्य है, जो उस प्रबल प्रचण्डमार्तण्डके तुल्य उत्तेजित लपटोंको सहै, मैं सब कुछ जानती हूं, परन्तु चन्द्रमासे चांदनी बिलग नहीं होती (फिर सुदर्शनकी ओर देखकर) हे नाथ ! मैं रो रोकर इतनी विनयकर रही हूं, तुम क्यों नहीं बोलते ? मुझ दासीसे ऐसा क्या अपराध हुआ ? प्यारे ! सदा दासीका अपराध स्वामी क्षमा करते रहे हैं, फिर मुझ दीन दासीसे क्यों रूठ रहे हो. स्वामी ! जो न बोलोगे तो मैं अपने प्राणघात करके देह त्याग दूंगी.

राग जोगिया.

मुझको मझधारमें छोड़ प्यारे, हाय ! स्वामी किधरको सिधारे।
तुमने मेरेलिये राज छोड़ा, अपने मा बापसे नाता तोड़ा।
मेरे मिलनेका जब ढंग जोड़ा, इतनेमें वैरी भयो पिता मोरा१
बेखता तुमको फांसी दिलाई, उस समय तुमने मुझको बुलाई।
हाय ! मैं दुखिया आने न पाई,इतनेमें यह गजब हो गया रे२
अब मैं कैसे अकेली रहूंगी, और यह कैसे कठिन दुख सहूंगी।
अपना स्वामी मैं किसको कहूंगी,क्या हुआ मैंने क्या ढंग विचारे।
बागकी बातको याद करलो, कहते थे मुझसे प्यारी यह वरलो।
तुमको छोडूं न मैं उम्र भरलों, क्या वचन थे हमारे तुम्हारे४
स्वप्नमें बांकी झांकी दिखाकर, जाने क्या जादू मुझपै दियाकर।
आप तो चलदिये मुहँ छिपाकर, इकली कैसे रहूंगी मैं प्यारे५

इस विपत्तिमें मेरा कौन साथी, इकली क्या करसकूंगी मैं अनाथी।
हाय मनमें मेरे आस क्या थी, जिसके बदलेमें यह दुख हुआरे६
मुझको बूँटी जहरकी मंगादो, घोलकर शीघ्र मुझको पिलादो
मुझको वह मार्ग झटपट बतादो, मेरे स्वामी जिधरको सिधारे७
यह पिताही हुआ मेरा वैरी, अब सगा अपना किसको कहैं री।
अपना प्याराही जब ना रहैरी, आप जी कर करै फिर वह क्यारे।
मेरे अपराध कीजो क्षमा अब, जितने छोटे बड़े ह्यां खड़े सब।
भूलूंगी ना पिताजीका करतब, अब मैं होती हूं सबसे बिदारे ९
मेरी झटपट बनाकर चितारी, मुझको प्यारेके धोरे बिठारी।
आग सब मिलके दीजो लगारी, कहती हूं मैं यह सबसे पुकारे१०

स्वर्णल०—(आंखोंमें आँसू भरकर) प्यारी! क्यों वृथा प्राण खोती हो, कहीं प्राण खोनेसे प्राणनाथ मिले हैं, तुम्हारा उनका इतनाही समागम था.

लाव०—सखी! क्यों मुझको भ्रमजालमें डालती हो, मेरा और प्रीतमका जन्मान्यजन्मसे समागम चला आया है, और सदासे प्राणनाथकी दासी रही हूं. यह मुझको भलीभांति निश्चय है, कि पतिव्रता स्त्री जन्म जन्म पतिके निकट रहती है.

सरोजि०—प्यारी! तुम किस मोहके फन्दमें पड़ी हो, न पिता है, न पुत्र है, न तात है, न मात है न, भ्रात है, न स्त्री है, और न पति है, यह सब संसार स्वप्नकीसी माया है.

लावण्य०--इस बातसे तुमको कुछ प्रयोजन नहीं, तुम मेरी चिता बनादो, जब प्राणनाथही नहीं, तो मैं दुखिया जीकर क्या करूंगी.

स्व०सरो०--(गद्गदकण्ठसे) हे प्यारी! हमको किसको छोड़ जाओगी, जब आपही नहीं तो हम कहां, हम तुमसे पहिलेही प्राण छोड़नेको प्रस्तुत हैं.

लावण्य०--हे प्यारी! जब तुमहीं प्राण छोड़ बैठी, तो मेरी और मेरे प्राणपतिकी गति कौन करेगा (आपही आप) हाय दई! तू भी मेरी ओरसे ऐसा निर्दई होगया जो मेरी इस दीनदशापर तनक भी ध्यान तूने न किया और मुझ अभागिनिको यह कठिन दुःख दिखाया. अरे पापी निर्लज्ज! तेरे कलेजेके टुकड़े २ न हुए. तू ऐसा कठोरचित्त होगया. अरे अन्यायी! ले सैंत रख अपने कर्तव्यको. (फिर ऊर्ध्वश्वास भरकर) हाय प्राणनाथ! हा प्राणेश्वर! हा प्राणपति! यह विपत्ति मुझसे नहीं सहीजाती. (यह कह एक कटारी ऐसी मारी कि शर्द होगई.)

स्व०सरो०--(शिरोघात कर) हाय! सर्वनाश होगया, सर्वनाश होगया, हाय! हमारी राजकुमारी भी मरगई, विधाता अन्यायी हमारे सुखको न देखसका. अरे अधर्मी, अब तो तेरे कलेजेमें ठंढक पड़ी जो हमारी राजकुमारी भी भेट ली. हा प्राणप्यारी! अब हमारी रक्षा कौन करेगा, और कौन हमें प्यारी २ कह बारम्बार बुलावेगा? हम तो तुम्हारे आगे अपने मातापिताको भी भूल गई थी, और तुमको भी

अपना जीवनमूल समझे थीं. हे प्यारी! जो तुम हमको जरा भी दुःखी देखती थी, तो खान पान तज मतवाली हो बारम्बार बुझती थी कि, तुमपर क्या दुःख है. हाय! अब कौन हमारे दुखदर्दकी बूझेगा? (यह कह दोनों मूर्छित हो पृथ्वीपर गिरपड़ीं, और जवनिका पतित होती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटकका प्रथम गर्भांक समाप्त ॥ १ ॥

द्वितीयगर्भाङ्कः

(स्थान राजासमरसिंहकी सभा.)

(राजा समरसिंह सिंहासनपर बैठे हैं, मंत्री और सेनापति इधर उधर खड़े हैं, सैकड़ों मनुष्य घूम रहे हैं.)

रा०समर०—मंत्री! कल जो उस चोरको फांसीके लिये आज्ञा दी थी उसको फांसी लगगई?

मंत्री—महाराज! आपकी आज्ञानुसार: प्रातःकालही कोतवालने स्मशानमें लेजाकर वधिक लोगोंको सौंपादिया, कि, इसको फांसी देदो, और सेनापति अपनी सेना लेकर पहुँचगया.

रा०समर०—ऐसे अत्याचारीको फांसीका ही दण्ड देना उचित है.

मंत्री—महाराज! वह अत्याचारी नहीं था, प्रेमी था.

प्रेमियोंका पंथही निराला है, आप इस भेदसे सचेत नहीं, ये लोग प्राणोंको तो कुछ वस्तुही नहीं समझते, शीश तो प्रथमही अपने मित्रके समर्पण करते हैं, पीछे प्रेमके पन्थमें पांव धरते हैं,सैकड़ों विपत्ति सहते हैं,परन्तु प्रेमको नहीं छोड़ते.

रा० समर०—तुमने हमसे उस समय क्यों नहीं कहा.

मंत्री—मैंने तो आपसे कहा, आप क्रोधमें ऐसे वशीभूत हो रहे थे, किसी बातपर ध्यानही न था. मेरा क्या दोष है? आपको उचित था कि, दश बीस दिन अपने पास रखकर उसके लक्षण देखते, फिर उसका सब भेदभाव खुलजाता.

विदूषक—अब उस बातकी चर्चाही क्या है, जो होगया सो होगया, राजाओंका कामही चोरोंके फांसी देनेका है, परमेश्वरकी दयासे सहस्रों मनुष्य, इनकी आज्ञासे मारेगये होंगे, जो एक एकका ऐसा सोच करते, तो सब राजकाज छोड़कर, इसी कामके होगये होते, बीती बातका सोच करना मूर्खोंका काम है. चतुर मनुष्य, बीती बातका कभी स्वप्नमें भी स्मरण नहीं करते.

(विद्रुमलताका प्रवेश.)

विद्रुमल०—महाराजकी जय हो.

रा० समर—क्यों?

विद्रुमल०—महाराज लावण्यवतीने आपको यह पत्री दी है.

रा० समर०—लाओ, लावण्यवती है तो प्रसन्न.

विद्रुमल०—इसीमें लिखा होगा.

रा० समर०—मंत्री इस पत्रको पढ़ो.

मंत्री—(पत्रीको देखकर) महाराज! इसमें कुछ गुप्तविषयकी वार्ता है, एकान्तमें चलिये. (दोनों जाते हैं.)

रा० समर०—पत्रीमें क्या गुप्तवार्ता है? शीघ्र पढ़ो.

मंत्री—बहुत अच्छा. (पत्रपाठ.)

श्रीमन्महाराजाधिराजक्षात्रवंशअवतंसभूपमुकटमणिनृपतिकुलभूषण समरविजयी, पिताजीके पदाम्बुजकी सेवामें आज्ञाकारी कुमारी लावण्यवतीकी यह प्रार्थना है. हे पिताजी! जो कभी मैंने आपकी ओर आँख उठाकर नहीं देखा, सो आज निर्लज्ज बनकर, आपकी सेवामें यह निर्लज्जताका पत्र लिखना पड़ा. अपराध क्षमा कीजिये. क्या करूं? दैवइच्छासे बेवश हूं. अबतक आपकी अत्यन्त लज्जा की. अब कहांतक लज्जा करूं? लाजही लाजमें मेरा सब सर्वस्व लुटा जाता है. आपने जो सुदर्शनको फांसीकी आज्ञा दी है, यह अच्छा नहीं किया. अब आपको उचित है, कि मेरे ऊपर अनुग्रह करके राजकुमार सुदर्शनको छोड़ दो, और जो तुम उसको न छोड़ोगे तो बड़ा उपद्रव मचेगा; न जानिये किस किसके प्राणघात हों, क्यों कि, वह सुदर्शनकुमार श्रीमन्महाराजराजेंद्र विजयपुराधीश राजा विजयसिंहका पुत्र है, मैं उसको स्वप्नमें देखकर, उसके रूपपर मोहित होगई, और प्रेमलताको योगन बनाकर भेजा, वह अत्यन्त परिश्रमसे नगर २

ग्रामग्राममें अनुसरण करके अपने संग लाई. मैंने सच्चे मनसे उसको अपना पति नियत किया. जब वह प्राणपतिही नहीं तो मेरे प्राणोंकी क्या कुशल है ? भला, कहीं चन्द्रमा विन चन्द्रिका रहती सुनी है, और जो उसके पिताको समाचार पहुँचगया तो महायुद्ध होगा, और शतशः वीरोंका विध्वंस होजायगा, और न जानिये क्या हो. अधिक लिखनेकी क्या अवश्यकता है, थोड़े लिखेको बहुत समझना.

रा०समर०—(अकुलाकर) हाय ! आज सर्व नाश होगया.

मंत्री—महाराज ! धैर्य धारण करो, शोकाकुल मत हो, सब काम सिद्ध होगा, परन्तु मैंने तो पहिले ही कहा था, क्या कीजिये, दैवगति सर्वोपरि बलवान् हैं.

रा०समर०—मंत्री ! अब क्या उपाय करना चाहिये.

मंत्री०—महाराज ! अभी तो सब उपाय हो सकता है.

रा०समर०—फिर क्या विलम्ब है ?

मंत्री—आप शीघ्र चलिये, और सुदर्शनको फांसीसे उद्धार कीजिये.

(नैपथ्यमें महाकोलाहल.)

रा०समर०—मंत्री देखो तो रणवासमें कैसा कोलाहल मचा.

मंत्री—रणवासकी ओरको मैं जाताहूं, आप शीघ्र श्मशानको जाइये, क्यों कि दिन बहुत चढ़ा है, कभी उस रा-

जकुमारको फांसी न होजाय, जो उसको फांसी लगगई तो सब काम बिगड़ जायगा, और फिर कोई यत्न न बनेगा.

रा०समर०—अच्छा तुम रणवासको जाओ, मैं श्मशानको जाता हूं. (दोनों गये, यवनिका पतित होती है.)

इति श्रीलावण्यवती सुदर्शननामनाटकका द्वितीय गर्भाङ्क समाप्त.

तृतीय गर्भाङ्क.

स्थान स्मशानभूमि फांसीघर.

लावण्यवती मरीपड़ी है, और सुदर्शनकी लोथ उसके धोरे धरी है, सरोजिनी और स्वर्णलता दोनों बैठी रोरही हैं, और शूरवीर शस्त्रलिये घूम रहे हैं.)

(राजा समरसिंहका प्रवेश.)

रा०समर०—(लावण्यवतीको मरा देख अचानक घबराकर) अरी सरोजिनी ! यह क्या उपद्रव हुआ ? वृत्तान्त तो कह.

सरोजि०—महाराज ! इस समय मेरी सुधबुध ठिकाने नहीं, राजकुमारीकी बातें स्मरण करकरके मेरे कलेजेके टुकड़े २ हुए जाते हैं.

रा०समर०—अरी स्वर्णलता तूही बता, यहां लावण्यवती कैसे आई, और कैसे प्राण तजे ?

स्वर्णल०—महाराज ! लावण्यवतीने स्वप्नमें सुदर्शनकु-

मारको देख, अपना पति मानलिया, और प्रेमलताको योगिन बनाकर भेजा, और प्रेमलता सुदर्शनको, और उसके मित्र सुलोचनको योगी बनाकर लाई, और दोनोंको बागमें ठहराया, और लावण्यवतीसे सुदर्शनका मिलाप हुआ. सुदर्शनको कोतवाल आपके पास पकड़लाया. उस समय सुलोचन वहां नहीं था. आगे सब वृत्तान्त आपको भलीभांति विदित है. तौ भी लावण्यवतीने सब लज्जा तज आपको एक पत्री लिखकर विद्रुमलताके हाथ भेजी. परन्तु आपने उसका कुछ ध्यान न किया, उसका फल आपके नेत्रोंके सन्मुख उपस्थित है.

रा०समर०—पहिलेसे तो मैंने इस बातकी चर्चा भी नहीं सुनी. जिससमय विद्रुमलता मेरेपास पत्री लेकर आई उसी घड़ी सब काम धाम छोड़, यहां आया. यहां पहिलेही विधाताने सब काम बिगाड़ रक्खा था. हाय! जो पहिलेसे मुझको यह भेद विदित होता तो मैं क्यों सुदर्शनको फांसीकी आज्ञा देता? हाय! पुत्री भी गई और कलंक भी लगा. हे लावण्यवती हे लावण्यवती!! अरी, इस बूढ़े बापकी ओर तो आंख उठाकर देख, मैंने तो तुझको ही पुत्र करके समझा था, मुझे ले देके तो परमेश्वरने एक कन्या दी सो भी विधाता निर्दईने लेली, हाय! मैंने पिछले जन्ममें ऐसा क्या महाघोर पाप कियाथा, जिसका यह फल मिला? हाय! हाय अरे पापी प्राण, तू ऐसा कठोर होगया, जो इतने कष्टपर भी इस शरीरकी ममताको

नहीं छोड़ता. हाय ! दई जाने अभी इस शरीरको क्या क्या कष्ट भोगना पड़ेगा. (यह कह धरणीमें शिर दे मारा और मूर्छित हो गिरगया.

सरोजि०—अरी स्वर्णलता ! वस्त्रसे महाराजकी पवन कर.

स्वर्णल०—सखी ! अब महाराजके जीनेकी भी आस नहीं जान पड़ती.

सरोजि०—सखी ! परमेश्वरकी इच्छा जानी नहीं जाती.

स्वर्णल—अरी ! जाने हमारे इस आगेके भाग्यमें क्या क्या दुख देखना लिखा है. क्या विचार था और क्या हो गया. हाय ! हमारा आदरका करैया और धैर्यका देवैया, कोई पृथ्वीपर दृष्टि नहीं आता. अब जीकर क्या होगा. कहींसे जहरकी बूटी लाओ जो घोलकर पीलें.

सरोजि०—हे विधाता ! जो पहिलेही हमको उठा लेता तो यह महाकठिन दुःख देखना न पड़ता. हाय प्राणप्यारी ! हाय प्राणप्यारी ! !

रा०समर०—(सचेत हो, रोकर) बेटी ! ये तुम्हारी प्यारी सखी बिष घोल रही हैं, उठकर इनका हाथ क्यों नहीं पकड़ती, ये अपने प्राण खोनेको उपस्थित हैं. हे बेटी ! बोलती नहीं, तनक मेरी ओरको आँख उठाकर तो देखो, मेरे रोनेका तुझको कुछ भी ध्यान नहीं, तू तो कभी मेरे दुःख-को देखही न सकती थी. हाय ! आज मेरा पढ़ा पढ़ाया तोता

पिंजरा छोड़कर न जानिये किधरको उड़गया, हाय मेरी कोकिला! तेरे बोलोंको स्मरण कर मेरा हृदय भरा आता है, हाय मेरी आँखोंकी पुतली! तुझविना सब संसार मुझे अंधेरा दृष्टि आता है, हाय बेटी! तुझको अंगुल २ नापकर पाला था, और तूने हमारा कुछ भी मोह नहीं किया. हाय! अपनी प्राणप्यारी मातासे बिन कहे चल दी. जो वह अभागिन तेरा मरण सुनेगी, तो उसी समय प्राण त्याग देगी. हाय! उस परमेश्वरने कोई पुत्र तो पहिलेही नहीं दिया था, जैसे वैसे करके एक कन्या थी उसको भी विधाताने उठालिया. इस समय कोई छोकड़ा होता तो धैर्य तो मनको बँधता, इस वंशका अंत तो पहिलेही होचुका था; कुछ किंचिन्मात्र आशा थी, वह भी आज विधाताने हरली. हे बेटी! वह कौनसा दिन होगा, जो मैं अपनी प्राणप्यारी बेटीको हृदयसे लगाऊंगा, हाय पुत्री! मुझे इस अवस्थामें अकेला छोड़कर कहां चली गई? हे पुत्री! एक समय वह था, तुझको पुष्पोंकी शय्यापर भी नींद नहीं आती थी, आज इस कठिन कठोर भूतलमें ऐसी बेसुध पड़ी है. करवट भी नहीं लेती. तेरी यह दशा देख, सब नगरनिवासी हाहाकार कर रहे हैं. हे विधाता! अब मुझसे यह कठिन दुःख देखा नहीं जाता, तू मुझको उठा ले वा इससे भी कोई और कठिन दुःख दिखाना है.

(एक दूतका प्रवेश.)

दूत—महाराज कहां हैं ?

रा०समर०—क्यों ?

दूत—महाराज ! सर्वनाश होगया.

रा०समर०—क्या कोई विपत्तिकी आगकी चिनगारी उड़कर वहां भी जा पड़ी ?

दूत—महाराज ! लावण्यवतीका मरण सुनकर राजमहिषी, प्रथम तो बहुत रोई पीटी, अन्तको देह त्याग परमधामको सिधारी. सब रणवासमें हाहाकार मचरहा है.

रा०समर०—(अकुलाकर) हाय ! यह दुःखकी आग कहांसे प्रगट होगई, जिसने क्षणमात्रमें सबका स्वाहा करदिया. हा प्राणे—

(यह कह राजा समरसिंह मूर्छित हो धरणीपर गिरता है, और यवनिका पतित होती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननाम नाटकका षष्ठाङ्क सम्पूर्ण.

सप्तमांक.

स्थान बाग.

(चारों ओर काली २ घटा छा रही है, और नन्हीं २ बूँदें पड़रही हैं और सुलोचन अकेला बैठा सोच कर रहा है.)

सुलोचन—कलसे जो सुदर्शन लावण्यवतीके मन्दिरमें

गया है, अभीतक उसका कुछ समाचार नहीं मिला, क्या करूं, कहां ढूंढूं, किससे बूझूं, न जानिये लावण्यवतीके मोहमें मतवाला हो, मुझको भूलगया, वा किसीने पकड़लिया, मैं अपना सन्देह कैसे निवारण करूं ?

(प्रेमलताका प्रवेश.)

प्रेमलता—महाराज ! किस ध्यानमें हो ? शीघ्र उठो. यह समय सोचसंकोचका नहीं. तुमको अपने मित्रका ध्यानही नहीं, कि कलसे कहां है ?

सुलोचन—(चौंक कर) प्रेमलता, क्या हुआ ? आज तुमने यह पुरुषका वेष कैसे धारण किया ?

प्रेमलता—महाराज ! आपके लिये भी यह शस्त्र और घोड़ा जोड़ा लाई हूं.

सुलोचन—किसकारण, और सुदर्शन कहां है ?

प्रेमलता—आपको यह भी सुध नहीं ?

सुलोचन—(घबराकर) क्या हुआ ?

प्रेमलता—(नेत्रोंमें नीर भरकर) सुदर्शनको राजा समरसिंहने पकड़कर फांसीकी आज्ञा दी है, और लावण्यवतीने इसीलिये घोड़ा और शस्त्र और केशरिया वागा भेजा है, और कहा है, आपके व्यतिरिक्त इस समय कोई हमारा सहायक नहीं, इधरसे तो मैं जाती हूं, उधरसे आप आवें, और जैसे बने वैसे सुदर्शनको बचाओ.

सुलोचन—क्या हमारा प्यारा सुदर्शन पकड़ागया.

प्रेमलता—महाराज! यह समाचार तो सब नगरमें विख्यात है.

सुलोचन—(झट शस्त्र लगाकर) समरसिंहने क्या विचारा है, काल क्यों न हो, एकवार तो उससे भी लड़कर सुदर्शनको छुटा लाऊंगा, और जबतक मेरे नथुनोंमें श्वास रहैगा, मैं अपने मित्रके शत्रुओंको सुखसे कभी सोने न दूंगा. प्रेमलता! सावधान रहना, शस्त्रोंपर ध्यान रखना, वैरियोंकी सेनाको देखकर घबराना मत, परमेश्वरने चाहा तो दो दंडमें शत्रुओंका घमंड ढीला कर सुदर्शनको ऐसे निकाल लावेंगे, जैसे हाथियोंके गुथमेंसे सिंह सिंहनी अपने बच्चेको बेखटके निकाल लेजाता है.

प्रेमलता—महाराज! आज शत्रुसेनाको मारकर ऐसे विछादो, जैसे किसान खेतीको काटकर विछादेते हैं, कोई शत्रु खेतसे भागकर जाने न पावे. वह देखो, शत्रुका कटक घटाकी समान मैदानमें बादलसा गर्ज रहा है, और अस्त्र शस्त्र विजलीसे चमक रहे हैं.

सुलोचन—मैं अपनी बड़ाई अपने मुखसे नहीं कह सकता, परन्तु एकवार तो शत्रुसेनाको ऐसे तितरवितर करदूंगा, जैसे हाथियोंके झुण्डको सिंहका बच्चा काईसी फाड़ देता है. मेरी यह सत्यप्रतिज्ञा है कि, जिसने मेरे मित्रको फांसी की

आज्ञा दी है, उसका शिर काटकर, उसकी जिह्वाके खण्ड २ करदूंगा.

प्रेमलता—महाराज ! शीघ्र चलिये, कहीं वह दुष्ट राजकुमारको फांसी न दिलवादे.

सुलोच०—अरी प्रेमलता ! बागके द्वारपर यह योद्धा कैसे मरे पड़े हैं ? विदित होता है कि, यहां किसीसे युद्ध हुआ है.

प्रेमलता—महाराज ! मुझको कुछ सुध नहीं. यह वृत्तान्त मालिनको ज्ञात होगा.

सुलोच०—अरी मालिन् ! तुझको कुछ सुध है कि, यह वीरोंकी लोथें यहां कैसी पड़ी हैं ?

मालिन्—महाराज ! जब कोतवालने आकर, राजकुमार सुदर्शनको घेरा, उस समय राजकुमार ऐसा लड़ा कि, क्षणमात्रमें कोतवालके वीरोंको मार तोड़ चांदना करदिया. ऐसा समरविजयी वीर न जानिये कोतवालने कैसे पकड़लिया. बड़े आश्चर्यकी बात है !

सुलोच०—कुछ सन्देहकी बात नहीं. भले २ शूरमा अवसरपर चूकजाते हैं. परन्तु परमेश्वरने कृपा की तो आज एक एकसे बदला लेलूंगा.

प्रेमलता—यह तो मुझको भलीभांति विश्वास है. परन्तु शीघ्र चलिये. विलम्ब न कीजिये.

सुलोच०—भला, यह समय विलम्ब करनेका है ! मेरे मित्रकी यह गति और मैं विलम्ब करूं. धिक्कार है मेरे वीर-

त्वको और इस जीवनको, जो मित्रसे ऐसा युद्ध हो और मुझको समाचार न मिले. हाय! बड़े आश्चर्यकी बात है, जो मेरे होते मेरा मित्र पकड़ाजाय. और जो मित्रहीके काम यह देह न आया तो इस देहसे और क्या लाभ होगा?

दोहा.

जे न मित्रदुख देखकर, मनमहँ होत उदास।
तिनके दर्शन करत ही, होत नरककर वास ॥ १ ॥

(आपही आप) हे प्यारे! जिस अवसरमें कोतवालने तुमको पकड़ा था, उस समय गम्भीर स्वरसे तुमने मुझको क्यों नहीं पुकारा? मैं उसी समय कोतवालका शिर काट-कर, समरसिंहको समर्पण करता और कहता क्यों जी! परदे-शियोंकी रक्षा ऐसे ही होती है. हाय! जिस मित्रने जन्मसे मेरी रक्षा की, उस मित्रके लिये मैं अपने प्राण न दूं? अवश्य दूंगा. जहां उसका पसीना गिरेगा, मैं अपना रुधिर देनेको उपस्थित हूं.

प्रेमलता—महाराज! आपकी समान सच्चे प्रेमी और सुशील मित्र कहां मिलते हैं? आपही सरीखे पुरुषोंके आश्रयसे धरती आकाश खड़ा है. ऐसे पुरुष संसारमें बहुत न्यून होते हैं. आजकलके मनुष्य तो प्रथम अपना प्रयोजन देखते हैं, पीछे प्रीति करते हैं. जितना प्रयोजन न्यून होता जाता है, उतनी ही प्रीति घटाते जाते हैं. कार्य पूरा होनेपर पश्चात् फिर बात भी नहीं करते. मित्रताका धर्म परमेश्वरने आपहीके बाटेमें दिया है.

सुलोचन—अबकी जो मैं अपने मित्रको जीता जागता

देखलूं तो अपने जीवनको सुफल समझूं. क्योंकि, मुझको मार्गमें शकुन बुरे २ दिखाई दिये हैं. प्रथम तो भैंसापर चढ़ा म्लेच्छ सन्मुख आया, दूसरे स्त्रियोंको श्मशानमें रोता पाया. परमेश्वर कुशल करे. (दोनों श्मशानभूमिमें आते हैं, और जवनिका पतित होती है.)

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननामनाटकका प्रथमगर्भाङ्क समाप्त.

द्वितीय गर्भाङ्क.

स्थान श्मशानभूमि.

(राजा समरसिंह मूर्छित पड़े हैं, लावण्यवती और सुदर्शनके शव फांसीके पास पड़े हैं और सब नगरनिवासी हाहाकार कर रहे हैं).

सरोजि०—स्वर्णलता! तू क्या देखती है? पी ले गरलका कटोरा.

स्वर्णल०—सखी पहिले लावण्यवतीकी चिता बनाकर और सुदर्शनको उसमें बैठाकर, अग्नि प्रज्वलित कर दो; पीछे जो इच्छा हो सो करना. क्यों कि, लावण्यवतीने मरतेसमय कहा था, मेरी चिता बागमें बना देना.

सरोजि०—अरी! कहांका बाग, इसको भी धन्यवाद समझ, जो यहां दोनोंकी क्रिया होजाय, इस बातके भी सहस्रों योद्धा रखवाले हैं.

स्वर्णल०—अच्छा सखी, तो चन्दन और काष्ठसंग्रह करो. हे सखी! देखो, प्रेमलताको सुलोचनके बुलानेके लिये

भेजा था, वह भी अबतक न आई. न जानिये जीती है वा वह भी कहीं मरगई.

सरोजि०—अरी! जब खोटे दिन आते हैं, तब सभी काम उलटे होजाते हैं. बुरे दिनोंमें किसी बातका विश्वास नहीं.

स्वर्णल०—सत्य है आली! पलभरकी सुध नहीं. परमेश्वर जाने, क्षणमात्रमें क्यासे क्या कर दिखावे.

सरोजि०—क्या कल हम यह जानती थी, कि यह तीजा हमको महादुःखदायी होजायगी? हाय! रात बीचमें ही क्यासे क्या होगया.

स्वर्णल०—अरी! हमलोगोंका भाग ही आगलगा ऐसा है.

सरोजि०—सखी! हमारे ही भाग्यसे प्रेमलताको भी किसीने मारडाला दीखता है.

स्वर्णल०—क्या प्रतीति है! जिसका वैरी राजा उसके वैरी सब. न जानिये सुलोचनको भी किसीने पकड़लिया हो, वा सुलोचनके बुलानेका समाचार सुन, किसी दुष्टने प्रेमलताको भी मारडाला हो. इससे अब विलम्ब करनेका समय नहीं, शीघ्र चिता रचिये. न जानिये क्या उपद्रव उठ खड़ा हो.

सरोजि०—हाय! जिन हाथोंसे प्यारीके सोनेके लिये कोमल २ पुष्पोंकी सेज रचती थी, हाय! उन हाथोंसे लावण्यवती सुदर्शनकी चिता रचेंगी. (हाय २ करती जाती हैं, और चिता बनाती जाती हैं.)

(सुलोचन और .)

दूत—(वीरोंको देखकर) महारा !!! शीघ्र उठिये, दो वीर अश्वारूढ हाथोंमें नंगे खड्ग लिये पुकारते चले आते हैं, कहां है समरसिंह ! कहां है समरसिंह !

समरसिं०—(सचेत हो) क्या कहा ?

दूत—दो योद्धा महाबलवान् घोड़ोंपर चढ़े सिंहकी भांति दहाड़ते उजाड़ते, कटकको लथेड़ते चले आते हैं, और बारम्बार यही कहते हैं, कहां है समरसिंह कहां है समरसिंह. जिसने हमारे प्यारे सुदर्शनकुमारको फांसीकी आज्ञा दी है.

समरसिं०—(पड़ेही पड़े दोनों वीरोंको देखकर) कौन है समरसिंहका बूझनेवाला, इधर आओ, मैं हूं समरसिंह सिंहोंका पछाड़नेवाला, हाथियोंके दांत उखाड़नेवाला, समरविजयी. परन्तु अब अपने आपको अन्यायी समझ, मैंने शस्त्र खोल धरे. अब परमेश्वरसे मेरी यह प्रार्थना है कि, किसी शूरमाके हाथसे मेरी मृत्यु हो, जो इस कठिन कराल कष्टसे छूटूं.

सुलोच०—प्रेमलता— !

प्रेमलता—हां महाराज !

सुलोच०—क्या परामर्श है ?

प्रेमलता—जो आपकी इच्छा !

सुलो०—क्षत्रियोंका यह धर्म नहीं, जो अशस्त्रपर शस्त्र डालें.

प्रेमलता—फिर क्या करना ?

सुलोच०—सुदर्शनको छुटा लेना.

प्रेमलता [illegible]

सुलोच [illegible] समरसिंहजी !

समरसिं०—हां !

सुलोच०—श्मशानके मैदानमें सेनाके आनेका क्या कारण?

समरसिं०—मेरा अन्याय !

सुलोच०—आपको महाकठिन दुःख होनेका क्या कारण ?

समरसिं०—मेरा अन्याय !

सुलोचन—सुदर्शनको फांसीकी आज्ञा देनेका क्या हेतु ?

समरसिं०—मेरा अन्याय !

सुलोच०—मेरा मित्र सुदर्शन कहां है ?

समरसिं०—मेरे अन्यायसे वह भी लुप्त होगया !

सुलोचन०—अन्याय कैसा ?

समरसिं०—प्रथम अपने अन्यायको बताऊं, वा सुदर्शनको ?

सुलोच०—प्रथम अन्यायका ही वर्णन करो.

समरसिं०—अरे हत्यारे पापी प्राण ! उत्तर दे. (यह कहते ही तन त्याग दिया).

नेपथ्यसे शब्द हुआ—सुदर्शन कहां है? सुदर्शन और लावण्यवती दोनों परमधामको पधार गये.

सुलोच०—प्रेमलता ! यह भयानक शब्द कहांसे सुनाई दिया ! (चारों ओर देखकर) कौन है रे ! पापी दुराचारी ! जिसने छिपकर यह दुर्वाक्य कहा !

नेपथ्यसे—महाराज ...
समझो. मैं सत्य कहता हूं. इस समय ...
सुदर्शनको फांसीका आदेश दिया, और सुदर्शनका ...
देख, लावण्यवतीने भी अपने प्राण त्याग दिये. वह देखो! द-
क्षिणदिशाकी ओर मंदारके वृक्षके नीचे, सरोजिनी और स्वर्ण-
लता, दोनों सुदर्शन और लावण्यवतीकी चिता बना रही हैं.

(दोनों चिताके निकट गये.)

स्वर्णल०—(प्रेमलता और सुलोचनको देखकर) यह तु-
म्हारे परम मित्र आये! उठकर इनसे अंतसमयका मिलाप
तो करलो.

सुलोच०—(घबराकर) हाय प्यारे सुदर्शन! परमहितकारी!
हमारी ओर तो देखो. अपनी प्यारी लावण्यवतीको भी अपने
संग लेलिया. मुझको किसपर छोड़ा? मित्र! मुझे अकेले
रहनेकी सामर्थ्य नहीं. (मूर्छित हो, घोड़ेपरसे नीचे गिरपड़ा.)

प्रेमलता—हा प्यारी लावण्यवती! हा सुदर्शन! हा
सुलोचन! हा सुदर्शन!

सुलोच०—(चौंककर सुदर्शनका नाम सुन, सचेत हो-
कर) कहां है सुदर्शन, कौन सुदर्शन सुदर्शन पुकार रहा था?

प्रेमलता—महाराज! मैं अनाथिनी थी.

सुलोच०—क्या सुदर्शनको कहीं देखा था? जो मेरे प्यारे
मित्रको पुकार रही थी.

...दशाओंमें सुदर्शन ही

...—हा प्यारे मित्र सुदर्शन ! हा प्यारे मित्र सुदर्शन ! ! हा प्यारे मित्र सुदर्शन ! ! ! प्यारे, तुम तो चलदिये, मुझको यह तो बताते जाओ, मैं तुम्हारे मातापितासे क्या कहूंगा, और जो वे बूझेंगे, हमारा प्यारा पुत्र सुदर्शन कहां है? तो मैं उनको क्या उत्तर दूंगा ? हा प्यारे ! तुमने मुझे यहांका रक्खा न वहांका. मैं बीचही चौपटमें मारा पड़ा. अरे दई निर्दयी ! तू मेरे प्राण नहीं लेता. क्या इससे भी अधिक कोई और दुःख दिखावेगा? हे प्यारे ! मैंने तुमको वार वार समझाया, परन्तु तुम्हारे ध्यानमें कुछ न समाया. अब उसका फल तुमको भलीभांति भोगना पड़ा. ये सहस्रों मनुष्य आपका कौतुक देख रहे हैं. काहेको ये लोग इकट्ठे होते, और क्यों ठट्ठे मार २ कर हँसते और रोते. हाय ! यह अपनी मूर्खताका फल तुमको भोगना पड़ा. मुझे अकेला छोड़, तुम तो स्वर्गबासी होगये; मुझको मछलीकी भांति तड़फनेको यहां अकेला छोड़ गये. अपनी कही न मेरी सुनी. इस बालअवस्थामें परमेश्वरने मुझको यह कठिन दुःख दिखाया.

नगरनि०—यह तुम्हारा कौन है? और तुमसे कैसे विछड़ गया था ?

सुलोच०—इससमय मेरी बुद्धि ठिकाने नहीं.

नगरनि०—देखो भाई ! बहुत रोदन न करो और

उच्चस्वरसे ...
उसका मित्र समझ, चार ...
प्यारे, इस अधर्मीके फन्देसे सौ सौ कास ...
तुम्हारा मनोहर स्वरूप देख, युवा अवस्था देख, हमारा मन अ-
त्यन्त दुःखी होता है; और आंखोंसे आंसू नहीं थमते. अपने
मित्रकी चितामें शीघ्र अग्नि प्रज्वलित करो; और बहुत रो-
रोकर हमको मत रुलाओ.

सुलोच०—यह बात आपकी सब सत्य है. परन्तु मेरे
मनको धैर्य कैसे हो ? आजतक पलभरमें भी कभी बिलग न
हुआ. अब वह मेरे नेत्रोंके आगेसे उठा जाता है. बड़े शोककी
बात है. मित्रबिन मैं जीता रहूं ! धिक्कार है ऐसे जीवनको.

नगरनि०—जो तुमने अपने प्राण खोही दिये तो क्या
तुम्हारा मित्र मिलगया? कदापि नहीं. वृथा प्राण खोना चतुर
मनुष्योंका काम नहीं.

सुलोच०—मेरी चतुरता तो सब डूबगई. जो मुझको
यह ज्ञात होता कि मित्रकी यह गति होगी, तो कभी
अपने साथ योगी बनाकर, नहीं लाता. हाय ! यह दुःख देख-
देखकर भी यह कठोर हृदय नहीं फटता.

नगरनि०—भाई ! दैवइच्छा बलवान् है. इससे किसीकी
पार नहीं बसाती. व्यतिरिक्त धैर्य और धर्मके और कोई
उपाय नहीं. अब सब शोकसंतापको छोड़ो और समझो कि,
हमारा इसका इतने ही दिनोंका सत्संग था.

...और सं-

... यह समय असामर्थ्यका है. विना मौनी ...क और कोई यत्न दृष्टि नहीं आता. और जो कुछ मित्रताका धर्म था सो तुमने निर्वाह करही दिया. अब वह उपाय करो जो इसकी गति होजाय. पीछे जो आपकी इच्छा हो सो करना. प्रथम इसकी गतिका होना मुख्य है.

सुलोच०—प्रथम तो मेरा मन मेरे वशमें नहीं; और जो बलकरके मनको वशमें कर धैर्य भी किया तो यह अवस्था कैसे टेर होगी? (मित्रकी ओर देखकर) हे प्यारे! नेत्र उठाकर मेरी ओर देख तो ले. मेरे प्राण होठोंपर आगये तो भी तू नहीं बोलता. मैं पृथ्वीमें शिर देदेकर मार रहा हूं और तू मुझको नहीं पकड़ता. जो मुझको किंचिन्मात्र भी कष्ट होता था तो तू अपना प्राण देनेको प्रस्तुत होता था. जो मेरे नेत्रोंमें जलका कण भी देखता था, तो दोनों हाथोंसे अपना वस्त्र लेकर आंसू पोंछता था. अब मैं सौ सौ वार पुकारता हूं, और अश्रुधारा नदीकी भांति बही चली जाती है, और तू बात भी नहीं करता. अरे भाई! उठकर मेरी सहाय करो. मुझे अकेला जानकर, यह अन्यायी विधाता भी मेरे ऊपर अत्याचारपर अत्याचार करता है.

नगरनि०—देखो भाई! हम तुमको इतना समझाते हैं, और तुम कुछ नहीं समझते. वृथा रो रोकर अपनी आंखें लाल करते हो और शिर धुनते हो, और अपनी मूर्खता इस मृत-

कृशशरीरके ...
विलापोंको सुनते हैं, और ...
हो? यह कुछ नहीं समझेगा, तुम्हारे ही समझने...

सुलोच०---मैं सब कुछ समझता हूं और सर्वदेशी हूं, परन्तु मित्रविना सब विद्या विसर्जन होगई. जिस मित्रका चन्द्रमासा मुख ये नेत्रचकोर नित्यप्रति निहार रहते थे, वे नेत्र अब किसको देखेंगे?

हे मित्र! मैंने तुमसे प्रथमही कहा था, कि, प्रेमका मार्ग बहुत सूक्ष्म खाँड़ेकी धारके समान है. इसमें पद पदपर खटका है. दृष्टिसे असावधान हुआ और मृत्युके मुखमें गया. वह समय अब उपस्थित है, और प्रेमके पंथमें यह कुगति है. हे प्यारे! तुम आप भी गये और मुझको भी खोया. हे स्वर्णलता! अब सोच विचारका अवसर नहीं है. चितामें अग्नि प्रज्वलित कर.

स्वर्णल०—जो आज्ञा महाराजकी.

सुलोच०—हे वीरो! काष्ठ मँगाय, राजा समरसिंह-की भी दाहक्रिया करदो.

सेनापति---महाराज! मैं उसीसमय महाराज समर-सिंहकी और उनकी राजमहिषी, जिसने लावण्यवतीका म-रण सुन, अपनी देह तज दी थी, और जिनका शव भी यहीं आगया है उन दोनोंके लिये भी चिता तय्यार करके उन्हे चितापर सुला आया हूँ केवल आग लगानेकी देरी है.

सुलोच०—(विनयपूर्वक) भाइयो! अब सबसे विदा होता

... इतिहास लिखकर सं-
...। (चिताकी ओर देखकर) हे प्यारे सुदर्शन!
...अधता न करो मुझको भी संग लेतेचलो. वहां तुम्हारी सेवा कौन करेगा? हे माता लावण्यवती तू भी मुझको भूल गई.
(यह कहकर जलती हुई चितामें कूदता और अचेत होता है.)

सरोजि०—प्रेमलता! अब हमारे जीवनको भी धिक्कार है. जिनसे सब कुछ होता और संसारमें नाम चलता, वेही न रहे तो हम रहकर क्या करेंगी.

प्रेमलता०—सत्य तो है! हा सुदर्शन! हा सुलोचन! हा लावण्यवती! यह कह, तीनों उसी चितामें कूदती हैं और आकाशसे विद्याधरोंकी स्त्रियां पुष्प बरसाती हैं, और यह गाती हैं.

राग सोरठ.

देखेउँ मन्द प्रेमपरिणाम;
जबते अंकुर जमत चित्तमें, छूटत धन अरु धाम;
मित्र मित्र दिनरात रटत हैं, और न दूजो काम;
पहिले विरहअग्नि तन प्रगटत, चैन न आठो याम;
मारत तक तक तीर रात दिन, पीछे पापी काम;
गये सुदर्शन और सुलोचन, समरसिंह बलधाम;
प्रेमलता लावण्यवतीको, रह्यो नाम ही नाम;
पूर्ण प्रेम कर राम रमासों, जो चाहे विश्राम;
तज भ्रम लोभ मोह ममताको, भज मन शालग्राम.

इति श्रीलावण्यवतीसुदर्शननाटक सम्पूर्ण.